सोशल मीडिया पर राजनीतिक विमर्श

सोशल मीडिया के जरिए राजनीतिक मुद्दों पर जिस तरह की बहस अब हो रही है, वो पहले कभी नहीं दिखी। बीते एक साल में लगभग हर दूसरे दिन कोई न कोई राजनीतिक शख्सियत या घटना सोशल मीडिया पर लोगों के बहस का विषय बनी। नरेंद्र मोदी, राहुल गांधी और अरविंद केजरीवाल से जुड़ी तो हर ख़बर चर्चा में रही।

■ **पीयूष पांडे**

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की प्रेस कॉन्फ्रेंस के दौरान शुक्रवार को माइक्रोब्लॉगिंग साइट ट्विटर पर 10 में से पांच ट्रेंड इसी विषय से जुड़े थे। प्रधानमंत्री मीडिया के सामने सवालों के जवाब दे रहे थे तो सोशल मीडिया के मंचों पर हजारों लोग अपने सवाल उछाल रहे थे। प्रधानमंत्री ने भले इन सवालों के सीधे जवाब नहीं दिए लेकिन फेसबुक-ट्विटर आदि मंचों के जरिए सामने आए सवालों के इस समुच्चय ने संकेत दे दिया कि सोशल मीडिया ने अब आम आदमी को हर महत्वपूर्ण बहस का हिस्सा बना दिया है।

भारत में इंटरनेट को आए 18 साल हो गए हैं। फेसबुक और ट्विटर जैसे लोकप्रिय मंचों को आरंभ हुए भी आठ साल बीत गए हैं। इनके पहले 'ऑर्कुट' लोकप्रिय सोशल नेटवर्किंग वेबसाइट थी। लेकिन सोशल मीडिया के जरिए राजनीतिक मुद्दों पर जिस तरह की बहस अब हो रही है, वो पहले कभी नहीं दिखी। बीते एक साल में लगभग हर दूसरे दिन कोई न कोई राजनीतिक शख्सियत या घटना सोशल मीडिया पर लोगों के बहस का विषय बनी। नरेंद्र मोदी, राहुल गांधी और अरविंद केजरीवाल से जुड़ी तो हर ख़बर चर्चा में रही। कांग्रेस और बीजेपी के समर्थकों ने 'फेंकू बनाम पप्पू' की जंग इन्हीं मंचों पर लड़ी तो साल खत्म होते होते एक निजी न्यूज चैनल का स्टिंग ऑपरेशन 'ऑपरेशन सरकार' ट्रेंड बना।

> सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि भारतीय जनमानस राजनीतिक रूप से सचेत हो रहा है, और सोशल मीडिया उसके भीतर की चिंगारी को लगातार हवा दे रहा है। यह चिंगारी क्या 2014 में देश के भविष्य की सही राह तय करेगी–यही आज का सबसे बड़ा सवाल है।

मसला सिर्फ सोशल मीडिया पर किसी बहस के संचालित होने भर का नहीं है। मसला है राजनीतिक बहस में हाशिए पर पड़े लोगों के अचानक केंद्र में आने का। 'हैशटैग', 'लाइक' और 'शेयर' की ताकत पर सवार होकर आम लोग अब अपने विचारों के घोड़े सरपट दौड़ा रहे हैं और इन लोगों को इस बात की चिंता नहीं है कि बुद्धिजीवी क्या सोचेंगे? अब राजनीतिक विचार व्यक्त करने का अधिकार टेलीविजन चैनलों के दफ्तरों में बैठे न्यूज़ एंकरों, विशेषज्ञों अथवा चंद विशिष्ट लोगों तक

सीमित नहीं रह गया है। 'रियल टाइम' में आम लोग अपने विचार प्रकट कर रहे हैं, और अगर उनकी बात में दम है तो उन्हें नजरअंदाज करना मुश्किल है क्योंकि तकनीक ने उन्हें यह सुविधा दे दी है। उदाहरण के लिए हैशटैग क्रांति। हैशटैग यानी दो रेखाओं का दूसरी दो रेखाओं को काटते हुए एक चिन्ह (#)।

ट्विटर की कार्यप्रणाली ने इस छोटे से चिन्ह को एक ताकतवर औज़ार के रुप में प्रचलित कर दिया है। ट्विटर ने विषयों को उनके शीर्षक के हिसाब से श्रेणीबद्ध करने के लिए 'हैशटैग' को अपने सॉफ्टवेयर का हिस्सा बना लिया और फिर इसी आधार पर ट्रेंड तय होने लगे। इसका लाभ यह कि यदि ट्विटर पर आपका एक भी फॉलोवर नहीं है यानी आप बेहद आम शख्स हैं तो भी हैशटैग का इस्तेमाल कर आप उस व्यापक बहस का हिस्सा बन सकते हैं, जिस बहस में बड़े बड़े तुर्रम खाँ अपनी बात कह रहे हैं। इन दिनों यही हो रहा है। प्यू रिसर्च फाउंडेशन के ताजा शोध के मुताबिक भी सोशल मीडिया पर सक्रिय 45 फीसदी भारतीय शहरी आबादी राजनीतिक बहस में हिस्सा लेती है। यह आंकड़ा अरब मुल्कों को छोड़कर दुनिया के सभी देशों से ज्यादा है।

सोशल मीडिया पर अत्याधिक राजनीतिक सक्रियता का क्या कोई मतलब है? सच कहा जाए तो इस सवाल का सही जवाब 2014 के आम चुनावों के बाद पता चलेगा। लेकिन, तमाम अध्ययन, रिपोर्ट्स और आकलन यही कहते हैं कि फेसबुक-ट्विटर और दूसरे सोशल मीडिया मंचों पर बहती हवा लोकसभा चुनावों में नतीजों को कुछ हद तक प्रभावित जरूर करेगी। आईआरआईएस नॉलेज फाउंडेशन एवं इंटरनेट एवं मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया के एक संयुक्त अध्ययन में कहा गया था कि देश की 543 लोकसभा सीटों में 160 सीटों के नतीजों को सोशल मीडिया प्रभावित कर सकता है। सोशल मीडिया द्वारा प्रभावित होने वाले निर्वाचन क्षेत्र वे हैं, जहां कुल मतदाताओं की संख्या के दस फीसदी फेसबुक यूजर्स हैं अथवा जहां फेसबुक यूजर्स की संख्या पिछले लोकसभा चुनाव में विजयी उम्मीदवार के जीत के अंतर से अधिक हैं। इस रिपोर्ट में सिलसिलेवार तरीके से बताया गया था कि किस राज्य की कितनी सीटें सोशल मीडिया द्वारा प्रभावित हो सकती हैं।

यह कहना बेमानी होगा कि सोशल मीडिया की लोकप्रियता और जमीनी लोकप्रियता एक समान है, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि सोशल मीडिया की अपनी उपयोगिता है, और यह कुछ सीटों का गणित बिगाड़ सकती है। मसलन-मुंबई से सटे ठाणे में 2009 में विजयी उम्मीदवार 49,000 वोटों से जीता था, जबकि इस इलाके में फेसबुक यूजर्स की संख्या 4,19,000 से अधिक है। इसी तरह, जिन सीटों पर पांच-दस हजार वोटों के अंतर से फैसला हो सकता है, वहां सोशल मीडिया यूजर्स की भूमिका अहम हो सकती है। पिछले चुनावों तक वोटों के समीकरण को प्रभावित करने वाले कारकों में मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र, दलित अथवा अन्य जाति बाहुल्य क्षेत्रों को अहम माना जाता था। इस बार सोशल मीडिया पर सक्रिय वर्ग एक 'वोटर बिरादरी' की संज्ञा पा रहा है, जिस पर राजनीतिक दलों की निगाह होगी।खास बात यह भी कि सोशल मीडिया लोगों को वोट डालने के लिए प्रेरित करता है। यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया के तत्वावधान में हुई एक रिसर्च कहती है कि सोशल मीडिया पर अपने मित्रों को वोट डालते हुए देखने के बाद लोग वोट डालने के लिए प्रेरित होते हैं।

सही मायने में 2014 के चुनावों को देश का पहला सोशल मीडिया चुनाव भी कहा जा सकता है क्योंकि 2008 के चुनावों के वक्त भारत में फेसबुक उपयोक्ता 25 लाख से भी कम थे, जो अब बढ़कर करीब 9 करोड़ हो चुके हैं। ट्विटर के करीब दो करोड़ यूजर्स हैं। यह संख्या भारत की आबादी की तुलना में बहुत ज्यादा नहीं है, लेकिन ब्रिटेन जैसे कई देशों की आबादी से ज्यादा है। यानी इस संख्या की अहमियत कम नहीं है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि भारतीय जनमानस राजनीतिक रुप से सचेत हो रहा है, और सोशल मीडिया उसके भीतर की चिंगारी को लगातार हवा दे रहा है। यह चिंगारी क्या 2014 में देश के भविष्य की सही राह तय करेगी-यही बड़ा सवाल है।

(लेखक जीटीवी से संबद्ध हैं।)